मोहर्रम का सामान

लेखक : आयतुल्लाहिल उज़्मा सैय्दुल उलमा मौलाना सैय्यद अली नक़ी नक़वी
अनुवादक : श्री विवभूषण वर्मा सहायक अध्यापक यादगारे हुसैनी हायर सेकन्डरी स्कूल इलाहाबाद

हुसैन हुसैन हुसैन हुसैन

कौन ऐसा होगा जिसने मोहर्रम के दिनों में यह ध्वनि न सुनी हो। इसके साथ–साथ कुछ लोग सिर और वक्ष पीटते हुये दृष्टिगोचर होते हैं। यह लोग हुसैन[अ०] का शोक मनाने वाले हैं। इनको अज़ादार कहा जाता है।

हुसैन[अ०] वह है जिन्होंने दसवीं मुहर्रम सन् 61 हि0 को निर्दयी शासन के अत्याचारों और अन्याय के विरूद्ध लड़कर संसार के इतिहास में सबसे बड़ा बलिदान किया। उन्हीं हुसैन की स्मृति सदैव जीवित रखने के लिए जो कुछ किया जाता है उसको अज़ादारी कहते हैं।

हुसैन[अ०] के बलिदान होने की घटना की स्मृति सदैव के लिये अन्याय से घृणा एंव निर्दयता, हटता क्रूरता और हिंसा के सामने सिर न झुकने की घोषणा है। जो आवाज़ हुसैन[अ०] ने अत्याचारियों तथा विधर्मियों के विरूद्व उठायी थी वह उनकी अकेले की आवाज़ न थी वरन समस्त मानवता की आवाज़ थी न्याय, सत्य, धर्म और अल्लाह की यह आवाज़ समस्त संसार में प्रलय काल तक गूंजती रहेगी और सच्ची मानवता का संदेश देती रहेगी।

रोना

एक ऐसे अवसर पर अपने ध्यान को आकृष्ठ कीजिए जब एक महान आत्मा धारी मनुष्य एक उच्चकोटि पवित्र और महान से महान आदर्श की पूर्ति के लिये अन्यायी सेनाओं से घिरा हुआ है। उसके साथी इतने कम हैं कि उंगली पर सरलता से गिने जा सकते हैं। इसके विपरीत उसके शत्रु अगणित हैं। जिन्होंने इस पवित्रात्मा धारी व्यक्ति तथा उसके अबोध बालकों के लिये पानी बन्द कर दिया हो। तीन दिन की क्षुधा तथा तृष्णा में ये सत्य पर पर्वत की तरह अटल रहने वाले प्राणी एक एक कर के अपने सदस्य उत्साह तथा साहस को प्रकट करते हुये अपने जीवन को बलिदान कर रहे हों। पिता अपने कोमल अंग वाले पुत्र का शव उठा रहा हो, माता अपने प्यारे, युवक पुत्र को अपनी आंखों के सम्मुख भाले से आघात होते देख रही हो। बहनें अपने भाइयों को रक्त से लतपत देख रही हों। सुहागिनियों का सुहाग निर्दयता से उजड़ रहा हो पति की मृत्यु का शोक उनके हृदय को विदीर्ण कर रहा हो उनकी अन्तरात्मा से रामांचकारी चीखें निकल रही हों। निरअपराध अबोध अज्ञान बालक यहां तक कि छः माह का दूध पीता शिशु अपने पिता की गोद में अपने प्राण तड़फड़ाते हुये छोड़ रहा हो। शत्रुओं के तीर ने उसे मृत्यु शैय्या पर सुला देने के लिये विवश कर दिया हो, पिता इस दृश्य को वज्र सत्र ह्रदय करके देख रहा हो और रक्त की घूटें पी रहा हो।

उस समय यदि किसी मनुष्य में शेष मात्र भी मानवता होगी, कुछ भी सत्य का अंश होगा वह उस दृश्य को अपनी आंखों के सामने देखेगा

तो उसके हृदय में कौन सी भावना जागेगी? कितनी वेदना उत्पन्न होगी। इसका वर्णन करना अन्यन्त कठिन है। यदि वह ऐसी परिस्थिति में उनकी कुछ भी सहायता कर सकेगा तो करेगा चाहे उसे अपने प्राणों से हाथ धोना ही क्यों न पड़े और यदि किसी कारण वह उनकी सहायता करने से विवश हो तो क्या उसकी आंखों से आंसुओं की धारा न बह निकलेगी। अवश्य ही उसके दयावान नेत्र सजल हो उठेंगे। इसका अर्थ यह होगा, वह मनुष्य उस अमर शहीद के पवित्र चरणों में इन अश्रुओं को श्रद्वा तथा प्रेम के साथ अर्पण करता है। उसका साथ नहीं दे सकता यही मानवता के द्योतक तथा व्यक्ति समाज की मांग है कि वह एक ऐसे मनुष्य को जो सत्य पर अटल हो तथा एक उत्तम आदर्श की पूर्ति में महान संकट ग्रस्त हो देख कर उसकी सहायता करने से विवश रहने पर अपनी आंखों से दो बूँद आंसू बहाये। यह नहीं कि एक ओर तो वे अपार आपत्तियों से घिरे हों और दूसरी ओर उनकी दशा पर सहानुभूति रखने का दावा करने वाला दूर से खड़ा होकर मुस्कुरा रहा हो इस प्रसन्नता में कि वे लोग इतना बड़ा बलिदान देकर संसार में अमरकीर्ति के भागी होने जा रहे हैं।

ऐसा करने वाला मनुष्य बुद्वि तथा ज्ञान के समक्ष अपराधी होगा। और उसे ज्ञान तथा विचार में शून्य की उपाधि मिलेगी इसी तरह उन लोगों के बलिदान स्मरण कर और ऐसे संकटमय अवसर पर उनका साथ न दे सकने पर मनुष्य को रोना आयेगा, हंसी नहीं। घोर पश्चताप होगा, आनन्द नहीं। हृदय में एक दुःखदवेदना रूपी शूल चुभता मालूम होगा पुष्प की कोमल लड़ियों के स्पर्श का आनन्द नहीं प्राप्त होगा। इस कारण उनकी स्मृति को जगाने का केवल यही एक उपाय है कि शोक मनाकर उनकी आत्मा को शान्ति प्रदान की जाये तथा मानवता का कर्म भी पुरा किया जाये।

यह कायरता नहीं वीरता है

आपत्तियों के आने पर आंसू बहाना वास्तव में कायरता है परन्तु सह सदैव स्मरण रखना चाहिए कि युद्व के अवसर पर अपने प्राणों के डर से रो देना कायरता का चिन्ह हो सकता है परन्तु किसी ऊंचे लक्ष्य तथा आदर्श की रक्षा के लिये रण में लड़ने वाले का साथ देने का अवसर न होने के शोक में रोना ही वीरता की सबसे बड़ी पहचान है। यदि यह रूदन अपना इसी तरह सच्चा रोना रहे, केवल प्रवृत्ति तथा रिवाज बन कर न रह जाये तो एक ऐसी श्रेष्ठ भावना को जीवित रखने का सामान हो सकता है कि अगर अब भी सत्य और असत्य का सामना हो जाये तो सत्य के लिये हर बलिदान देने के लिये सदैव उद्यत रहें।

यह तो हुआ इसका दार्शनिक अंश। इसकी धार्मिक हैसियत यह है कि कुरआन में रोने का उल्लेख प्रशंसा के साथ मौजूद है। नबियों की रीति में रोना भी सम्मिलित है। स्वंय हजरत मोहम्मद साहब अपने चचा हज़रत हमज़ा के शहीद होने पर रोए थे इसके अतिरिक्त उन्होंने इमाम हुसैन[अ०] की शहादत की सूचना दी भी थी। उनको याद करके रोये भी थे और धर्माधिकारियों ने इसकी ताकीद भी की है कि मानवता और धर्म का यह संगम इस शोक के अमरत्व का उत्तरदायी है।

मजलिस

ऐसी सभा जिसमें इमाम हुसैन तथा उनकी महान आपत्तियों का वर्णन किया जाये मजलिस कहलाती है। इमाम हुसैन की शहादत के पश्चात मजलिसें व्यक्तिगत एंव सामूहिक रूप से होती हैं। आपत्तियों के मारे इमाम हुसैन के परिवार वाले जहां बैठ गये वहीं मजलिस हो गई। हज़रत मोहम्मद[स०] की संतान में जो इमाम हुसैन[अ०] के बाद हुये उनके यहां जो मजलिसें हुयी वे सब इसी तरह की थीं। जब भी उनके मित्र एक स्थान पर एकत्र हुये और इमाम हुसैन[अ०] की चर्चा चली,

सब लोगों ने मिलकर आंसू बहा लिये यह मजलिस हो गयी। जब कोई कवि आ गया जिसने उनकी जीवन गाथा पर कविता कही और पढ़ दी तो वह मजलिस हो गयी। कभी कभी इस सम्बन्ध में इस का भी प्रबन्ध किया गया है कि इमाम ने पर्दे के पीछे अपने घर की औरतों को बैठाया कि वे भी इसे सुनें।

इन मजलिसों में रूदन और विलाप होता था। रूदन की आवाज़ भी बलन्द होती थी। उस समय की परिस्थिति में इस से अधिक और कुछ भी न हो सकता था।

शनैः शनैः इमाम के संकटों और दुःखों के अतिरिक्त दूसरी बातें भी वर्णन की जाने लगीं। अब मजलिस जनता के सुधार और उनके ज्ञान को बढ़ाने का एक मन्त्र बन गया है। जिसमें प्रत्येक दशा में इमाम हुसैन पर रोना अत्यन्त आवश्यक होता है।

ताज़िया

यह इमाम हुसैन की समाधि का प्रतिरूप है, जो सोने चांदी, पीतल, लकड़ी और कागज़ से बनाई जाती है यह विशेषतः भारत की वस्तु है और कहा जाता है कि ताज़िये का उठाना तैमूरलंग के समय से प्रचलित है।

इमाम हुसैन[अ०] के रौज़े तक पहुंचना भारतवासियों के लिये प्रायः कठिन है। अतः उनके चरणों में अपनी भावनाओं को इसी ढंग से अर्पित किया जाता है। चूंकि ताज़िया करबला की सूरत है इस कारण उसे बड़े आदर के साथ रखा जाता है।

अलम

''अलम'' का अर्थ है झंडा। करबला में इमाम हुसैन के पताकाधारी हज़रत अब्बास थे और अलम के कारण सब के अन्त में इमाम हुसैन ने हज़रत अब्बास को लड़ने की आज्ञा दी थी। जिस शान से हज़रत अब्बास[अ०] ने अपने झंड़े की रक्षा अंतिम सांसों तक की उसका उदाहरण अन्यत्र मिलना अत्यन्त कठिन है सहस्त्रों का सामना अकेले किया परन्तु अलम कन्धे पर रहा। दाहिना हाथ कट गया तो बायें हाथ मे ले लिया। जब बायां हाथ कट गया तो झंड़े को सीने से लगा कर दोनों कटी हुयी भुजाओं से संभाला मगर गिरने नहीं दिया। हाँ जब आप स्वंय भुमि पर गिरे तो अलम भी पृथ्वी पर गिरा। यही अलम का महत्व है। जिसके कारण अलम अज़ादारी का अंग बन गया है। यह एलान है इस बात का कि जो झंड़ा करबला के रण क्षेत्र में गिरा था। वह अब भी नहीं झुका और हुसैनी संघ उस झंड़े को ऊंचा रखने का उत्तरदायी है। अलम हमारे हुसैन की सहायता न कर सकने के महान खेद का चिन्ह है और उन से घृणा का द्योतक है जिन्होंने इमाम हुसैन के साथ ऐसा अमानुषिक तथा निर्दयता का दुर्व्यवहार किया। यह अलम हमारे शोक में युद्व की भावना जागृति करता है। कि हम असत्य, अन्याय अनीत तथा अहिंसा का दृढ़ता से सामना करने को सदैव उद्यत रहें।

मश्क

इस अलम के साथ कभी कभी एक छोटी सी मशक भी लटकती रहती है। उसमें एक वांण लगा हुआ दिखायी देता है। यह मशक तथा तीर उस दुःखद घटना की याद दिलाते हैं। जब पताका धारी हज़रत अब्बास[अ०] हुसैन के बच्चों के लिये पानी लेने सरिता के तट पर गये थे। इस प्रकार ध्वजा वाहक के साथ–साथ पानी पिलाने वाले का कर्तव्य भी पूरा किया। इस प्रयत्न में वे इस हद तक सफल हुये कि सहस्त्रों की सेना को पराजित करके पानी भर लिया लेकिन खेद है कि वह अपार संकटों को झेल कर मिला हुआ जल शिविर तक न पहुंच सका। हज़रत अब्बास का रक्त भी बहा और एक तीर मश्क में भी लगा जिससे पानी भुमि पर बह गया। रक्त के बहने से नहीं किन्तु जल के बह जाने से हज़रत अब्बास हताश हो गये अलम तथा मशक सहित घोड़े से भूमि पर आ गिरे और वीर गति पाई। इस मश्क तथा अलम का अब तक साथ है।

ताबूत

यह एक ऐसा बाक्स होता है जिसमें शव उठाया जाता है। इराक और ईरान में प्रायः सन्दूक में उठाया जाता है। भारत में भी उत्तर प्रदेश के कुछ भागों विशेषतया लखनऊ में शव उठाने की यह रीति प्रचलित है। इतिहास से विदित होता है कि इसलाम में सर्व प्रथम हज़रत फ़ात्मा ज़हरा[स०] (मोहम्मद साहब की सुपुत्री) की अर्थी उनकी स्वेच्छा के अनुसार ताबूत में ही उठायी गई थी। उनके अनुयाइयों में भी यह रीति अभी तक प्रचलित है।

इमाम हुसैन[अ०] की अज़ादारी में ताबूत का अंग उसी खेद जनक घटना की याद दिलाता है कि करबला में इमाम हुसैन की अर्थी जनाज़ा नहीं उठ सकी, क्योंकि आप की शहादत के पश्चात उन ह्रदयहीन निर्दयी शत्रुओं ने आप के परिवार को बन्दी बना कर कूफे (इराक़ की प्राचीन राजधानी) तक गली गली घुमाया और इमाम हुसैन[अ०] के पवित्र शव को खुले मैदान में प्रचन्ड धूप में छोड़कर चले गये उसके तीसरे दिन बनी असद के गोत्र वालों ने आपको उसी स्थान पर दफ़न कर दिया। इस घटना की याद सदा ताबूत से जीवित रहती है।

दुलदुल

मोहर्रम के जलूस के साथ–साथ और कभी मजलिस के समाप्त होने पर एक घोड़ा निकाला जाता है जिसकी पीठ श्वेत वस्त्र से आवरित रहती है, उस श्वेत वस्त्र पर लाल रंग की छींटें पड़ी हुयी दिखायी देती हैं जो कि रक्त की छींटों के चिन्ह को सूचित करती हैं। घोड़े के एक तलवार तथा एक तीर भी लटका रहता है। उसी घोड़े को दुलदुल या ज़ुलजनाह कहते हैं। ज़ुलजनाह इमाम हुसैन के घोड़े का नाम था। जिस पर सवार होकर आपने करबला में जिहाद(1) किया था। जब इमाम हुसैन लड़ते लड़ते बलिदान हो गये तो यह घोड़ा अपने मस्तक पर रक्त भरकर इमाम हुसैन[अ०] के शिविर पर यह प्रगट कराने आया था कि इमाम हुसैन[अ०] ने अपने उत्तम आदेश की सुरक्षा में अपने प्राणों की आहुति दे दी।

गहवारा या झूला

यह करबला के बहुत बड़े शहीद अर्थात सबसे अल्पायु वीर अली असग़र की दुःखद घटना की याद को सदैव–जीवित रखता है। यह झूला इस बात की याद दिलाता है कि इमाम हुसैन ने अपने छः महीने के दूध पीते प्राणों से भी प्यारे बच्चे को भी सत्य की रक्षा में मौत के हाथों अर्पित कर दिया।

इसके साथ साथ यह उन कठोर ह्रदय वाले रूपी शत्रुओं के अमानुषिक कार्यों का प्रतीक है जिनके द्वारा उस नन्हें शिशु को जिसको हुसैन इस लिये अपने साथ लाये थे कि कदाचित बच्चे को देखकर शत्रुओं के ह्रदय में मानवता तथा दया की किरण फूट पड़े और अपने को वे समझे कि हम किस मार्ग पर चल रहे हैं, उससे दूर हट जायें, जो प्यास के मारे अपनी सूखी जिहा को अधरों पर फेर रहा था उसको भी इस भय से कि कहीं हमारी सेना हमारे हाथ से न निकल जाये तीन फलों वाले तीरों से मारा फलतः उस नन्हें से सुकुमार बालक की गर्दन कट गई तथा इमाम हुसैन की एक भुजा भी छिद्रित हो गयी।

सबील

मोहर्रम के जुलूस निकलने के समय जिस मार्ग से जलूस निकलता है उस मार्ग के दोनो ओर बहुत से लोग घड़ों में पानी भर कर रख देते हैं उसके पास अनेकों कुल्हड़ पानी पीने के लिये रखे रहते हैं। ये घड़े तथा कुल्हड़ इस बात की याद दिलाते हैं कि जब इमाम हुसैन तथा उनके साथी धर्म युद्ध में तल्लीन थे। उस समय उनके साथी, जिसमें बालक तथा महिलायें भी सम्मिलित थीं तीन दिन से प्यासे थे उन्हें किसी प्रकार जल नहीं मिल रहा था वह प्यास सच मुच उनके

---

(1)किसी उत्तम तथा उच्च तथा आदर्श तथा सत्य की रक्षा के लिये लड़ना या प्रयत्न करना। इस शब्द का अर्थ है 'प्रयत्न'

प्राणों की प्यास हो रही थी लेकिन फिर भी वे अपने कर्त्तव्य पथ से विचलित न हुये अपने समस्त साथियों के साथ पवित्र विचारों के लिए बलिदान हो गये प्रत्येक व्यक्ति जो पानी पिये वह इमाम हुसैन[अ०] तथा उनके साथियों को याद करें जो कि जल तृष्णा से छटपटाते हुये प्राणों के लिये मरकर अमरत्व को प्राप्त हुये।

मेंहदी

इसकी रीति केवल भारत में ही है। करबला में इमाम हसन[अ०] (इमाम हुसैन[अ०] के बड़े भाई) की स्वेच्छा से ठीक दसवीं मोहर्रम को इमाम हसन के लड़के क़ासिम को रण क्षेत्र में भेजते समय अपना दामाद बनाया। इस प्रकार ऐसी संकटमय दशा में शोक की एक और रेखा को बढ़ा दिया। ब्याह इस्लाम में कोई उल्लास का अवसर नहीं वरन एक पवित्र कर्त्तव्य की पूर्ति है। ब्याह के समय मेंहदी लगाना यह केवल भारत की ही प्रणाली है। भारतवासियों के शब्दों में वह क़ासिम अपने हाथ मेंहदी से रंग कर अपने प्राणों को न्योछावर कर संसार में सदा के लिये अमर हो गये। इसी प्रकार अन्य रीतियाँ भी हैं जो भारत के अतिरिक्त अन्य देशों में प्रचलित हैं।

मोहर्रम के जुलूस में इन समस्त सामग्रियों के प्रयोग का तथ्य यह है कि हम उस इमाम हुसैन की स्मृति को सदैव जीवित रखें जिन्होंने सत्यपथ से भटके हुये मानव के अज्ञान रूपी अंधकार को सूर्य बन कर विनष्ट किया अपवित्र विचारों के गहरे गर्त में पड़े हुये पापात्माओं को अपने बलिदान का सहारा देकर उन्हें विस्तृत एंव प्रकाशमय मैदान में खींचा। हमें जाग्रति जो अत्याचार अन्याय, असत्य तथा अधर्म का दृढ़ता के साथ सामना करने का साहस देती है। उस इमाम हुसैन की अमर कीर्ति संसार में सर्वदा जगमगाती रहेगी। इस के साथ साथ उन पर कुरता तथा दानवता का व्यवहार करने वाले अत्याचारियों के दुर्विचारों तथा दुष्कृत्यों को सदा घृणा से देखते रहेंगे और इमाम हुसैन तथा उनके साथियों की रोमांचकारी, हृदय विदारक मृत्यु पर महान शोक मनाते रहेंगे। और कहते रहेंगे हाय हुसैन! हम न हुये हाय हुसैन! हम न हुये।

संसार के भिन्न भिन्न देशों ने अपनी रीतियों के अनुसार करबला की घटना को अपने रंग में रंग लिया है। परन्तु वास्तविक उद्देश्य सब का एक ही है।

(इमामिया मिशन लखनऊ प्रकाशन नं0 118 चतुर्थ एडिशन, 1312 हि0)



(पेज नं0 10 का बक़िया...................)

इसी संतुष्ट आत्मा के प्रतीक व लक्षण थे जो आंखों के सामने आ रहे थे ओर अब मक़ातिल और इतिहास के पन्नों पर हमारे समक्ष हैं।

यही संतुष्ट आत्मा है जिसे दुश्मन तक की निगाह ने महसूस किया, उस समय जब आप ज़ख़्मों से चूर, बहत्तर दाग़ दिल पर और अनगिनत तीर, नैज़े व तलवार के ज़ख्म जिस्म पर खाये हुए जंग के मैदान में शहादत की मंजिल से क़रीब से क़रीब तर हो रहे थे तो दुश्मन ने उस समय भी कोई ऐसी ख़ास खुसूसियत महसूस की जिसकी गवाही तबरी की तारीख में अब तक सुरक्षित है कि मैंने कोई ऐसा इंसान नहीं देखा जो ज़ख्मों से चूर हो और जिसके अज़ीज़ और दोस्त क़त्ल हो चुके हों और वह हुसैन अ0 से अधिक संतुष्ट नजर आता हो।

यह थे हुसैन अ0 जो बिला शक उस महान संतुष्ट आत्मा के धारक थे कि जब इन तमाम मुश्किलों और मुसीबतों के कठिन रास्तों को तय करते हुए अपने पैदा करने वाले की बारगाह के सामने पंहुचे तो खुद खुदा स्वागत के तौर पर आवाज़ दे कि ''ऐ संतुष्ट आत्मा (नफ्से मुतमइन्ना) अपने पालने वाले की ओर पलट आ, ऐसी हालत में कि मैं तुझसे राज़ी और तू मुझसे राज़ी हो जा अतएव तू मेरे खास बन्दों में शामिल हो जा और मेरी जन्नत में दाखिल हो जा।''

जो सूर–ए–फ़ज्र की आखिरी आयत है और इसी लिए यह सूरा हुसैन के सूरे के लकब से मशहूर है।

